ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-7 No. 1 July 2020

चंपारण किसान आंदोलन और गाँधीजी: एक विश्लेषण

अजित सिंह चौधरी
सहायक आचार्य
इतिहास विभाग
श्री कल्याण राजकीय कन्या महाविद्यालय, सीकर
ई-मेल - ajitsingh441954@gmail.com

शोध सारांश
चंपारण सत्याग्रह सामान्यतः गाँधीजी के पहले गैर-राजनीतिक जमीनी संघर्ष के रूप में जाना जाता है, जो उन्होंने उत्तरी बिहार में स्थित चंपारण जिले के गरीब और उत्पीड़ित किसानों के लिए किया था। चंपारण सत्याग्रह महात्मा गाँधी द्वारा भारत में किया गया सत्याग्रह का पहला प्रयोग था। यह अंग्रेजों की नीति के प्रतिरोध का अनुठा तरीका था जिसने आगे चलकर सत्याग्रह को प्रतिरोध के आदर्श मानक के रूप में स्थापित किया। चंपारण का मामला बहुत पुराना था। उन्नीसवीं सदी के आरम्भ में गौरे बागान मालिकों ने किसानों से एक अनुबंध करा लिया, जिसके तहत किसानों को अपनी जमीन के 3/20वें हिस्से में नील की खेती करना अनिवार्य था। इसे ''तिनकठिया पद्धति'' भी कहते थे। चंपारण में 1860 के दशक से ही तिनकठिया व्यवस्था का छिटपट विरोध होता रहा था। जब उन्नीसवीं सदी के समाप्त होते-होते जर्मनी के रासायनिक रंगों ने नील को बाजार से बाहर कर दिया। किसानों को अनुबंध से मुक्त करने के लिए गोरे बागान मालिकों ने लगान व अन्य गैरकानूनी अव्वावों की दर मनमाने ढंग से बढ़ा दी गई थी।
चंपारण का संघर्ष अंग्रेजों के शोषण और ग्रामीण जनता के भयमुक्त संघर्ष की कहानी है। वर्ष 2017 में महात्मा गाँधी के चंपारण सत्याग्रह के 100 वर्ष पूरे हो चुके हैं। गाँधीजी ने दक्षिण अफ्रीका में सत्याग्रह और अहिंसा के अपने आजमाए हुए अस्त्र का भारत में पहला प्रयोग चंपारण की धरती पर ही किया था। यहीं उन्होंने यह भी तय किया कि वे आगे से केवल एक कपड़े पर ही गुजर-बसर करेंगे। इसी आंदोलन के बाद उन्हें 'महात्मा' की उपाधि से विभूषित किया गया। देश को राजेन्द्र प्रसाद, आचार्य कृपलानी, मजहरूल हक, ब्रजकिशोर प्रसाद जैसी महान विभूतियाँ भी इसी आंदोलन से मिली। इन तथ्यों से समझा जा सकता है कि चंपारण किसान आंदोलन भारत के राजनीतिक इतिहास में कितना महत्वपूर्ण है।
प्रस्तुत शोध पत्र में चंपारण किसान आंदोलन में गाँधी जी भूमिका और उनके योगदान का विस्तृत विवरण प्रस्तुत किया गया है तथा साथ ही इस आंदोलन का भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में महत्व को बताया गया है।
गाँधी जी के चंपारण आने और सत्याग्रह करने पर ही किसानों को शोषण से मुक्ति मिल पाई।
कुंजी शब्द: सत्याग्रह, अहिंसा, तिनकठिया पद्धति, नील, उपनिवेशवाद

प्रस्तावना
भारतीय राजनीति में महात्मा गाँधी के उदय ने भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में एक नये चरण की शुरूआत की जिसे इतिहास में जन-राष्ट्रवाद के युग के रूप में वर्णित किया गया है। भारतीय राजनीति में प्रवेश करने से पूर्व वह दक्षिण अफ्रीका में थे, जहाँ औपनिवेशिक शासकों द्वारा नस्लीय दम्भ प्रदर्शित किया गया और स्थानीय लोगों के शोषण ने गाँधीजी को उपनिवेशवाद के विरूद्ध संघर्ष को गंभीरता से लेकर सोचने पर विवश किया। दक्षिण अफ्रीका में अपने संघर्ष के दौरान उन्होंने जन आंदोलन को नई दिशा देने हेतु अहिंसा और सत्याग्रह पर आधारित अपने राजनीतिक दर्शन को विकसित किया। भारत की समृद्ध सांस्कृतिक परम्परा और धार्मिक विचारों का ज्ञान तथा लिये टॉलस्टोय, जॉन रस्किन, रॉल्फ वाल्डो, इमर्सन और हेनरी डेविड थोरे जैसे पश्चिमी विचारकों के अध्ययन ने उनके राजनीतिक विचारों को व्यापक रूप से आकार दिया। आरंभिक राष्ट्रवादी नेताओं से आगे बढ़ते हुए गाँधीजी ने जन लामबंदी के माध्यम से राष्ट्रवादी राजनीति को नया अर्थ दिया। औपनिवेशिक शासन द्वारा निर्मित दमन, हिंसा और अन्याय की चुनौतियों का सामना करने के लिए गाँधी ने एक नयी राजनीतिक व्यवस्था की स्थापना हेतु निःस्वार्थता, साहस और नैतिक बल

Copyright © 2020 Authors

ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-7 No. 1 July 2020

पर आधारित आंदोलन के लिए अपील की। नागरिक प्रतिरोध के गाँधीवादी तरीके को उपनिवेशवाद के विरूद्ध भारत के संघर्ष में विशिष्ट महत्व का माना गया और सत्याग्रह राजनीतिक एवं सामाजिक प्रतिरोधों को आवाज देने का प्रभावी माध्यम बन गया। गाँधीवादी राजनीति पर टिप्पणी करते हुए ज्यूडिथ ब्राउन का अवलोकन है कि ''जरुरतमंदों के लिए सेवा के उनके आदर्श ने यह संभावित कर दिया कि वे राजनीति में तभी भाग लोगों जब वे उन गलतियों को ठीक कर सकें जिनसे जनसामान्य जूझ रहा है, परन्तु वे ही थे जिनके पास राजनीतिक छत्र से बाहर के लोगों तक पहुँचने की भी क्षमता थी, ताकि सांस्थानिक राजनीति के नए तरीकों को उसकी आरंभिक सीमितताओं की खोल से बाहर निकाला जा सके और एक विशाल राजनीतिक राष्ट्र का निर्माण किया जा सके। सत्याग्रह की तकनीक उन लोगों के मध्य भी कार्य करने के लिए अनुकूल थी जो सांस्थानिक राजनीति के अभ्यस्त न थे।'' जिन संदर्भों और जटिलताओं के बीच गाँधीजी ने औपनिवेशिक शासन को चुनौति देने के लिए भारतीय जनमानस में एकता कायम करने का प्रयास किया, जनसाधारण के प्रति उनकी चिंता तथा मुख्यधारा की राष्ट्रीय राजनीति में आम-जनता को लाने के उनके प्रयास राष्ट्रीय राजनीति में एक नये चरण की शुरूवात को प्रदर्शित करते हैं।

चंपारण सत्याग्रह को महात्मा गाँधी का भारत में प्रथम सत्याग्रह माना जाता है, जो दूनिया के राजनीतिक इतिहास में ऐतिहासिक और अभूतपूर्व परिघटना है। चंपारण के इस प्रयोग से आमजन के हाथों में पहली बार, सत्याग्रह के रूप में ऐसा अचूक अस्त्र आया जिसके प्रयोग से आमजन ने बिना रक्त बहाये एक विश्वव्यापी साम्राज्य को जड़ से उखाड़ फैंका।

'चंपा के फूलों' से लदे पेड़ों की धरती के कारण इस इलाके का नाम पहले 'चंपा-अरण्य' पड़ा और फिर जोड़ते-घटते हुए (अपभ्रंश) 'चंपारण' हो गया था। चंपारण का संघर्ष अंग्रेजों के शोषण और ग्रामीण जनता के भयमुक्त संघर्ष की कहानी है। चंपारण बिहार राज्य के उत्तर-पश्चिम किनारे पर स्थित एक छोटा सा क्षेत्र है। मोतिहारी और बेतिया इसके दो मुख्य नगर है। उस समय इस क्षेत्र में दो हजार आठ सौ चालीस गाँव थे। गंडक नदी इस जिले के मध्य से गुजरती है और इस नदी से जुड़ी कई झीलें बेतिया शहर के आसपास बन गई थी। चंपारण में नील की खेती 18वीं शताब्दी के अंत में शुरू हुई। 1793 के स्थायी बंदोबस्त के अनुसार बेतिया, रामनगर और मधुबनी स्टेट के तीन मालिक जिले की अधिकांश जमीन पर नियंत्रण रखते थे, परन्तु जमींदारों ने जमीन के प्रत्यक्ष प्रबंधन के स्थान पर अस्थायी अवधि के लिए कुछ धारकों को जमीन किराये पर दे दी। यूरोपीय अवधि-धारकों ने कृषि योग्य जमीन के एक बड़े भाग को अपने अधिकार में कर लिया था और अवधि मुनाफे की वजह से उन्होंने नील की खेती करना शुरू कर दिया। यूरोपीय बागान मालिकों ने भूमि की जुताई या तो प्रत्यक्ष रूप से की या किसान पट्टेदारों के जरिए। इस पलांटर राज के सबसे बुरे शिकार पट्टेदार ही थे।

फ्रैनकोश ग्रैंड, जो चंपारण जिले के कलेक्टर थे, 1782 से 1785 के मध्य यहाँ तीन नील कारखानों की स्थापना की थी और नीला रंग बनाने का कार्य प्रारम्भ कराया था। धीरे-धीरे इनकी संख्या बढ़ती गई और उन्नीसवीं सदी तक यहाँ 73 नील के कारखाने स्थापित हो गए जिनमें लगभग 75,000 हजार लोग काम करते थे। नील की खेती में चंपारण पूरे देश में आगे था क्योंकि सबसे ज्यादा कारखाने यहीं स्थित थे।[1]

बिहार के इस क्षेत्र में वृहद स्तर पर नील के पौधे की खेती की जाती थी और नील को बड़ी मात्रा में विदेशी राष्ट्रों में भेजा जाता था, जहाँ इनकी भारी मांग थी। सन् 1900 ई. तक नील चंपारण की मुख्य रूप में उत्पादित होने वाली फसल बन गई, यहाँ तक कि इसकी खेती चीनी से भी अधिक हो गई। चंपारण में नील की खेती की प्रमुख प्रणाली 'तिनकठिया प्रणाली' थी। इस व्यवस्था में प्रत्येक किसान को अपनी भूमि के तीन कट्ठे प्रति बीघा (01 बीघा = 20 कट्ठा) अर्थात् अपनी भूमि के 3/20 में हिस्से में नील की खेती करने की बाध्यता थी। इसके लिए कोई कानूनी आधार नहीं थे। यह केवल नील फैक्ट्री के मालिकों (प्लांटरों) की इच्छा पर तय किया गया था। अगर किसान तिनकठिया व्यवस्था का पालन नहीं करते थे तो उन्हें इसकी क्षतिपूर्ति देनी पड़ती थी। कॉन्ट्रेक्ट या पट्टे के अनुसार किसानों को खेती का सारा खर्च वहन करना पड़ता था, सिर्फ बीज उन्हें फैक्ट्री के मालिक देते थे। उपज होने पर सारी उपज फैक्ट्री मालिकों द्वारा ले ली जाती थी

Copyright © 2020 Authors

ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-7 No. 1 July 2020

और किसानों को मामूली मजदूरी दे दी जाती थी। यदि किसी किसान की मृत्यु हो जाती थी तो उसके वारिस को ''बपही पुल्तीतार'' (Bapahi Putlitar) नामक कर अंग्रेज जमींदारों को देना होता था। शादी करने और विधवा विवाह करने पर भी किसानों को कर देना पड़ता था, जब अंग्रेज जमींदारों को हाथी, घोड़ा या नाव खरीदनी होती थी, तब भी वे इनके नाम पर रैय्यतों और किसानों से कर वसूल करते थे। इसके अतिरिक्त अंग्रेज जमींदारों के घरों और कारखानों में किसानों से बेगार भी करवायी जाती थी। इस प्रकार अंग्रेज जमींदार अनेक माध्यमों से किसानों का शोषण कर रहे थे। चंपारण के किसानों की स्थिति यूरोप और अफ्रीका के अर्द्ध-गुलामों से भी बुरी थी। यदि कोई किसान विरोध करता था तो उसे बुरी तरह से पीटा जाता था या कभी-कभार गोली भी मार दी जाती थी। ऐसी विषम परिस्थितियों में चंपारण के किसानों को रहना पड़ रहा था।[2]

उन्नीसवीं शताब्दी के समाप्त होते-होते जर्मनी के रासायनिक रंगों (डाई) ने नील को बाजार से बाहर खदेड़ दिया इससे अंग्रेज बागान मालिकों को नुकसान होने लगा। चंपारण के यूरोपीय बागान मालिक नील की खेती बंद करने के लिए विवश हो गए। किसान भी अब नील की खेती से छुटकारा पाना चाहते थे। गोरे बागान मालिकों ने किसानों की मजबूरी का फायदा उठाना चाहा। अपने नुकसान से बचने के लिए, उन्होंने नील उगाने के लिए किसानों के साथ अपने समझौतों को रद्द करना शुरू कर दिया। किसानों को इस दायित्व से मुक्त करने के लिए वे एक तावान यानि हर्जाना वसूलते थे जो सौ रूपये प्रति बीघा तक पड़ता था। यदि किसान नकद भुगतान नहीं कर पाते तो, प्रतिवर्ष 12 प्रतिशत की ब्याज दर पर हस्तांक-पत्र और बंधक ऋण-पत्र बनाए जाते थे।

बंगाल की तरह बिहार में भी नील की खेती के प्रति किसानों के बीच एक सार्वजनिक असंतुष्टि थी। इसका प्रमुख कारण फसल के लिए कम पारिश्रमिक मिलना था। उन्हें नील कारखानों के हाथों उत्पीड़न और अत्याचारों का भी सामना करना पड़ता था। इन सब के परिणामस्वरूप चंपारण में नील की खेती के विरूद्ध दो बार प्रतिरोध हुए। प्रारम्भ में सन् 1867 में लालसरिया फैक्ट्री के पट्टेदारों ने नील उगाने से इंकार कर दिया। चूंकि शिकायतों का निवारण संतोषजनक नहीं था, इसलिए सन् 1907-08 में एक दूसरा विरोध हुआ जिसमें साथी और बेतिया में तिनकठिया प्रणाली के विरोध में अशांति और हिंसा का प्रदर्शन हुआ। इस संघर्ष में सरकार ने खुले तौर पर जमींदारों का समर्थन किया। किसानों के विरूद्ध कई फर्जी मुकदमें दर्ज किये गये तथा कई किसानों को जेलों में बंद कर दिया गया। अंग्रेज जमींदारों और नील के कारखानों की सुरक्षा के लिए जो पुलिस नियुक्त की गई थी उसके खर्च के लिए तीस हजार की धनराशि किसानों से वसूली गई। यद्यपि यह आंदोलन दबा दिया गया परन्तु मुरली भारवा गाँव के राजकुमार शुक्ल ने इस प्रश्न को 1915 में बिहार कांग्रेस की बैठक में उठाया।[3] परन्तु बिहार प्रदेश कांग्रेस इस सम्बंध में कोई मजबूत कदम नहीं उठा सकी, तब राजकुमार शुक्ल ने इस प्रश्न को अखिल भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अधिवेशन में उठाने का निश्चय किया जो लखनऊ में 1916 में होने वाला था। अखिल भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की इस 31वीं वार्षिक बैठक में महात्मा गाँधी सहित देश के अन्य बड़े राष्ट्रवादी नेता भी चंपारण के किसानों की समस्या से परिचित हुए।[4]

राजकुमार शुक्ल लखनऊ अधिवेशन में किसानों के प्रतिनिधि के रूप में शामिल हुए थे। बिहार के प्रतिनिधियों ने गाँधीजी से अनुरोध किया कि वे चंपारण के अत्याचार के विषय में बोलें परन्तु गाँधीजी इसके लिए तैयार नहीं हुए क्योंकि उन्हें इस सम्बन्ध में कोई व्यक्तिगत अनुभव नहीं था। उन्होंने कहा कि जब तक मैं अपनी आँखों से इसे देख नहीं लेता तब तक मैं इस सम्बन्ध में अपनी कोई राय नहीं दे सकता।5 अतः बिहार के ब्रजकिशोर प्रसाद ने कांग्रेस के समक्ष चंपारण के प्रस्ताव को पेश किया। कांग्रेस ने अपने प्रस्ताव में कहा कि कांग्रेस, सरकार से विनम्रतापूर्वक यह अनुरोध करती है कि वह एक समिति की नियुक्ति करें जो चंपारण के किसानों और नील की खेती से जुड़े जमींदारों के सम्बन्धों पर अपनी रिपोर्ट दे और इसके निदान का उपाय करें।6 इस प्रस्ताव को कांग्रेस ने सर्वसम्मति से पारित कर दिया और बिहार के प्रतिनिधियों ने गाँधीजी से अनुरोध किया कि वे चंपारण आकर वहां की स्थिति का स्वयं अवलोकन करें। राजकुमार शुक्ल ने व्यक्तिगत रूप से गाँधीजी से मिलकर अनुरोध किया कि वे चंपारण आयें और किसानों पर हो रहे अत्याचार को स्वयं देखें। गाँधीजी ने वचन दिया कि वे अगले अप्रेल में चंपारण आयेंगें।

Copyright © 2020 Authors

ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-7 No. 1 July 2020

चंपारण किसान आंदोलन दो प्रकार के कारणों का मिश्रण था। वहाँ नील बागान के मालिकों द्वारा तकावी ऋणों और तिनकठिया व्यवस्था के कारण किसानों के हित की मांगों (जो स्पष्ट रूप से वर्गीय मांगे थी) की अभिव्यक्ति समृद्ध किसान और महाजन, बागानों के अंग्रेज मालिकों की ओर से से होने वाली स्पर्धा से नाराज थे। चंपारण के किसानों की शिकायतें और उनको लेकर चला आंदोलन गाँधी जी द्वारा हस्तक्षेप करने से पूर्व की घटनाएं थी। इस आंदोलन में गाँधीजी द्वारा हस्तक्षेप इस कारण संभव हो सका क्योंकि जैक्यूस पुष्पदास के शब्दों में ''स्वयं ग्रामीण जनता ने उपरी नेतृत्व पर दबाव दिया''।[7]

चंपारण और गाँधीजी

वैसे से इतिहास की प्रत्येक धटना की शताब्दी आती है और उसे सौ साल पुराना बनाकर चली जाती है। हम भी इतिहास को बीते समय और गुजरे लोगों का दस्तावेज भर मानते हैं। परन्तु इतिहास बीतता नहीं है, नए रूप और संदर्भ में बार-बार लौटता है और हमें विवश करता है कि हम अपनी आँखें खोलें और अपने परिवेश को पहचाने। इतिहास में कुछ घटनाऐ ऐसी होती है कि जब भी आपकी या आप उनको छूते या खोलते हैं तो आपको कुछ नया बना देती है, इसे ही पारस-स्पर्श कहते हैं। इतिहास में चंपारण की घटना एक ऐसा ही पारस-स्पर्श है। इस पारस-स्पर्श से ही गाँधीजी को वह मिला जिसके लिए इतिहास ने उन्हें गढ़ा था और वह गाँधीजी का ही स्पर्श था जिसने अहिल्या जैसे पाषाणवत् चंपारण को धधकता शोला बना दिया। दक्षिण अफ्रीका में नस्लीय भेदभाव के विरूद्ध आंदोलन में गाँधीजी की सफलता ने उन्हें भारत में एक नेता के रूप में प्रसिद्ध कर दिया, जिसने आम जनता के लिए औपनिवेशिक शासन के विरूद्ध लड़ाई लड़ी थी। दक्षिण अफ्रिका से भारत वापस आने के पश्चात्, शुरू मे उन्होंने यह निश्चय किया कि वे गुजरात में अपना निवास बनाऐंगें तथा जनकल्याण हेतु कार्य करेंगे। उस समय भारत में राष्ट्रीय आंदोलन दो विचारधाराओं में बंटा हुआ था- नरमपंथी और गरमपंथी। कुछ इस तरह के भी लोग थे, जो स्वतन्त्रता प्राप्त करने के लिए क्रांतिकारी तरीकों में विश्वास रखते थे। इस पृष्ठभूमि में गाँधीजी ने जनता के अलग-अलग वर्गों के साथ संवाद स्थापित करके एक राजनीतिक आधार विकसित करने की कोशिश की। नरमपंथियों और गरमपंथियों की राजनीति, स्वराज प्राप्ति हेतु गाँधीजी को सहमत न कर सकी, ना ही उन्हें क्रांतिकारियों की हिंसक राजनीति में विश्वास था। दक्षिण अफ्रीका में उनके सफल राजनीतिक आंदोलन से सत्याग्रह की शक्ति में पैदा हुए उनके विश्वास ने उन्हें भारत में सत्याग्रह की शुरूआत में लिए उचित अवसर की प्रतीक्षा करने हेतु उत्साहित किया। बिहार के चंपारण में 1917 में नील बागान मालिकों के विरूद्ध किसानों के आंदोलन ने गाँधीजी को वह इच्छित अवसर प्रदान कर दिया। गाँधीजी ने 1917-18 के दौरान चंपारण में पहला किसान आंदोलन चलाया। यह आंदोलन किसानों की चेतना और उसके माध्यम से उन बागान मालिकों के प्रति उनके विरोध की अभिव्यक्ति था जो नील की खेती के संदर्भ में अवैध एवं अमानवीय तौर-तरीकों पर उतर आए थे।[8] चंपरण के किसानों का संगठन एवं नेतृत्व मध्यमवर्ग के बुद्धिजीवियों ने किया था। गाँधीजी के अतिरिक्त इस आंदोलन के प्रमुख नेता थे- डॉ. राजेन्द्र प्रसाद, मजहरूल हक, ब्रजकिशोर आदि। परन्तु सुखबीर चौधरी अपनी पुस्तक में कहते हैं कि ''स्वयं किसान ही इस आंदोलन के प्रमुख आधार थे और उन्होंने आंदोलन में महत्वपूर्ण योगदान दिया।''[9]

भारत के स्वतंत्रता आंदोलन के इतिहास में चंपारण सत्याग्रह को मील का पत्थर माना जाता है। इसी आंदोलन की वजह से देशवासियों ने मोहनदास करमचन्द गाँधी को ''महात्मा'' के तौर पर पहचाना। गाँधीजी ने यहीं से अहिंसा को एक सफल विचार के रूप मे रोपा।

चंपारण का किसान आंदोलन अप्रेल 1917 में हुआ था। गाँधीजी ने दक्षिण अफ्रीका में अपने आजमाए हुए अस्त्र, अहिंसा और सत्याग्रह का भारत में पहला प्रयोग चंपारण की धरती पर ही किया। सन् 1916 में लखनऊ के भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के वार्षिक अधिवेशन में राजकुमार शुक्ल ने गाँधीजी से भेंट कर उन्हें चंपारण के किसानों की पीड़ा और अंग्रेजों द्वारा उनके शोषण की दास्तान बताई और उनसे इसे दूर करने का आग्रह किया। राजकुमार शुक्ल की जिद न होती तो चंपारण किसान आंदोलन से गाँधीजी का जुड़ाव शायद ही संभव हो पाता। वह गाँधीजी के पीछे-पीछे तब तक घूमते रहे, जब तक कि गाँधीजी चंपारण आकर किसानों की समस्याओं का अध्ययन

Copyright © 2020 Authors

ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-7 No. 1 July 2020

करने को राजी नहीं हो गए। अपनी आत्मकथा ''सत्य के प्रयोग'' के पाँचवे भाग के बाहरवें अध्याय ''नील का दाग'' में गाँधी जी लिखते हैं कि ''लखनऊ कांग्रेस में जाने से पहले तक मैं चंपारण का नाम तक न जानता था। नील की खेती होती है, इसका तो ख्याल भी न के बराबर था। इसके कारण हजारों किसानों को कष्ट भोगना पड़ता है, इसकी भी मुझे कोई जानकारी नहीं थी।''

गाँधीजी 10 अप्रेल को कलकत्ता से पटना पहुंचे और सीधे ही राजकुमार शुक्ल के साथ राजेन्द्र प्रसाद के घर गए। परन्तु राजेन्द्र प्रसाद घर नहीं थे इसलिए वे अगले दिन 11 अप्रेल को मुजफ्फरपुर पहुँच गए। मुजफ्फरपुर कॉलेज में प्रोफेसर जी.बी. कृपलानी और उनके छात्रों ने गाँधीजी का स्वागत किया। राजकुमार शुक्ल ने यहां गाँधीजी का साथ छोड़कर चंपारण का रूख किया, ताकि उनके वहां जाने से पहले सारी तैयारियां पूरी की जा सके। मुजफ्फरपुर में गाँधीजी ने राजेन्द्र प्रसाद, ब्रजकिशोर प्रसाद तथा अन्य बिहार के नेताओं से गहन विचार-विमर्श किया।[10] गाँधीजी के बिहार आगमन का उद्देश्य यह था कि वे चंपारण के किसानों और रैय्यतों की स्थिति का अध्ययन करें, उनकी शिकायतों को समझें जो अंग्रेज नील बागान मालिकों के विरूद्ध उनके मन में थी।

अपना कार्य आरम्भ करने से पूर्व गाँधीजी तिरहुत डिवीजन के कमिश्नर और प्लान्टर्स एसोसिएशन के सचिव से मिले। बैठक में गाँधीजी ने सार्वजनिक मांग के कारण चंपारण में नील की खेती की स्थिति और इसके साथ जुड़ी पट्टेदारों की शिकायतों के बारे में पुछताछ करने की इच्छा प्रकट की। उन्होंने यह भी कहा कि उनकी अशांति फैलाने की कोई मंशा नहीं है। यह साबित करने के लिए कि वास्तव में उनके आगमन की सार्वजनिक मांग थी, उन्हें परिचय पत्र दिखाने को कहा गया, जिसे उन्होंने अंततः प्रस्तुत कर दिया। स्पष्टीकरण के बावजूद भी ब्रिटिश अधिकारी गाँधीजी के उद्देश्यों के बारे में आशंकित थे। उनका मानना था कि उनकी मंशा आंदोलन करने की थी, जिससे सार्वजनिक शांति भंग होने की भारी संभावना थी। कमिश्नर ने गाँधीजी से कहा कि इसमें यहाँ किसी जाँच की आवश्यकता नहीं है और बाहरी व्यक्ति होने के कारण उन्हें इस तरह की जाँच करने का कोई अधिकार नहीं है।[11] गाँधीजी ने कहा कि वे अपने आपको बाहरी व्यक्ति नहीं समझते और उन्हंे जाँच करने का पूरा अधिकार है, अगर रैय्यत और किसान उन्हें जाँच करने को कहते हैं।[12] प्लान्टर्स के सचिव ने भी गाँधीजी की जाँच के प्रति अपनी अनिच्छा प्रकट की। अतः यह निर्णय लिया गया कि जैसे ही गाँधीजी चंपारण पहुंचे, उन्हें आपराधिक प्रक्रिया संहिता की धारा 144 के तहत जिला छोड़ने का नोटिस दिया जाना चाहिए।

कमिश्नर और पलान्टर्स के सचिव के नकारात्मक रवैये को देखकर गाँधीजी को यह विश्वास हो गया था कि रैय्यतों और किसानों की तकलीफों के विषय में उन्होंने जो कुछ सुना है वह सत्य है। साथ ही वे यह भी समझ गये कि उन्हें सरकार की ओर से अनेक बाधाओं का भी सामना करना पड़ेगा।[13] चंपारण के अनेक किसान मुजफ्फरपुर में आकर गाँधीजी से मिले और अपनी दुःखभरी कहानी सुनाई। इससे गाँधीजी बिना विलम्ब चंपारण पहुंचने के उत्सुक हो उठे। उन्होंने कहा कि, ''मैं चाहता हूँ कि वहां भी दक्षिण अफ्रीका की तरह आंदोलन आरम्भ कर सकूं। मैं जानता हूँ कि प्लान्टर्स और ब्रिटिश सरकार मेरे प्रति कठोर हैं और मुझे किसी भी क्षण गिरफ्तार किया जा सकता है। इसलिए मैं जितना जल्द हो सके चंपारण पहुँचना चाहता हूँ क्योंकि अब जो कुछ भी होना है वह रैय्यतों और किसानों के बीच में हो।''[14]

गाँधीजी अन्ततः 15 अप्रेल 1917 को चंपारण जिले के मुख्यालय मोतिहारी पहुंचे। उन्होंने जसौली गाँव का दौरा करने का निर्णय किया जहां एक पट्टेदार के साथ दुर्व्यवहार किया गया था। जब वे रास्ते पर ही थे तब पुलिस ने आकर उन्हें सूचित किया कि धारा 144 के तहत एक आदेश जारी किया गया है और उनसे वापस आने और जिला मजिस्ट्रेट से मिलने का अनुरोध किया। गाँधीजी रास्ते से लौट आए लेकिन उन्होंने नोटिस का पालन से इंकार कर दिया। उन्होंने मजिस्ट्रेट को लिखा कि वे चंपारण से नहीं जायेंगे और इस अवज्ञा का दण्ड भुगतने के लिए तैयार हैं। परिणामस्वरूप गाँधीजी पर भारतीय दण्ड संहिता की धारा 188 के तहत भी आरोप लगाए गए और 18 अप्रेल की मुकदमें के लिए बुलावा भेजा गया। मुकदमें की सुनवाई का दिन चंपारण के इतिहास में सबसे

Copyright © 2020 Authors

ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-7 No. 1 July 2020

यादगार क्षणों में से एक था। न्यायालय के सामने हजारों की संख्या में किसानों की भारी भीड़ जमा हो गई थी। गाँधीजी के सहयोगियों ने उपस्थित भीड़ को नियंत्रित करने का कार्य किया और अधिकारियों ने भी उनका साथ दिया, क्योंकि गाँधीजी ने उनके समक्ष यह स्पष्ट कर दिया था कि व्यक्तिगत रूप से उनका उद्देश्य उन्हें अपमानित करना नहीं बल्कि वे सिविलाना नाफरमानी के आधार पर सरकार के आदेश का विरोध कर रहे हैं।[15] परन्तु अधिकारियों के समक्ष यह पूरी तरह स्पष्ट हो गया था कि उनके आदेशों का कोई असर गाँधीजी पर नहीं हुआ है। गाँधीजी की उपस्थिति से लोगों के दिलों में शासन का भय पूरी तरह निकल गया था और वे अपने नये मित्र गाँधीजी के प्यार के प्रति पूरी तरह समर्पित हो चुके थे।[16] हजारों की संख्या में किसान और रैय्यत गाँधीजी के भक्त बन चुके थे और यह नैतिकता की बड़ी विजय थी। गाँधीजी ने कहा कि ''यह कोई बढ़ा-चढ़ा कर कहने वाली बात नहीं है, परन्तु एक सत्य है कि किसानों के आमने-सामने होते हुए मुझे लगा कि मैं ईश्वर, अहिंसा और सत्य के सम्मुख खड़ा हूँ।[17] राजेन्द्र प्रसाद लिखते हैं कि ''18 अप्रेल 1917 का दिन एक चंपारण के लिए ही नहीं बल्कि भारत के इतिहास के लिए भी महत्वपूर्ण है। आज के दिन महात्मा गाँधी हजारों गरीब किसानों के लिए जेल जाने को तैयार थे। इस दिन भारत की जनता ने गाँधीजी के सत्याग्रह की पहली झलक देखी थी जो आगे चलकर पूरे भारत में दिखाई पड़ने वाला था।''[18] न्यायालय में गाँधीजी ने अपना बयान पढ़ते हुए दुबारा कहा कि उनका किसी भी प्रकार का आंदोलन शुरू करने का उद्देश्य नहीं है अपितु उनका उद्देश्य केवल संकट-ग्रस्त किसानों के लिए मानवीय और राष्ट्रीय सेवा था जिसे वह आधिकारिक सहायता के साथ हासिल करना चाहते थे। उन्होंने कोई बचाव पेश नहीं किया, अपितु जेल जाने की स्वेच्छा व्यक्त की। गाँधीजी के इस रूख ने अधिकारियों को चकित कर दिया। संभ्रम की स्थिति को देखते हुए सजा सुनाने की प्रक्रिया को स्थगित करने का निर्णय लिया गया। इस दौरान लेफ्टिनेन्ट गवर्नर ने हस्तक्षेप किया और गाँधीजी के विरूद्ध अपर्याप्य साक्ष्य और धारा 144 लागू करने की संदिग्ध वैधता के आधार पर स्थानीय प्रशासन को मामला वापस लेने का आदेश दिया। इसके अतिरिक्त उन्होंने गाँधीजी को जाँच करने की अनुमति भी प्रदान कर दी। यह गाँधीजी के क्रांतिकारी सिद्धांतों की विजय थी और गाँधीजी ने कहा कि लोगों ने चंपारण में पहली बार सिविल नाफरमानी का प्रथम पाठ पढ़ने में सफलता प्राप्त की है।[19] इस प्रकार सिविल डिसओबीडियन्स (नाफरमानी) और सत्याग्रह के आदर्श जो बाद में भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन की विशेषता बन गए, चंपारण से प्रारम्भ हुए।

जाँच करने की अनुमति मिलने के पश्चात् गाँधीजी ने पहले मोतिहारी ओर फिर बेतिया में अपनी जाँच को आगे बढ़ाया। इस पूरे कार्य में उन्हें अपने सहकर्मियों से पूरी सहायता मिली, जिन्होनें पूछताछ के संचालन में स्वयंसेवकों के रूप में कार्य किया। इन स्वयंसेवकों में राजेन्द्रप्रसाद, ब्रजकिशोर प्रसाद, मजहर उल हक, जे.बी. कृपलानी, रामनवमी प्रसाद आदि कई हस्तियाँ शामिल थी। कई गाँवों से हजारों किसान नील खेती प्रणाली के प्रति अपनी शिकायतों के बारे में अपने बयान देने के लिए गाँधीजी के पास आए। गाँधीजी किसानों के लिए एक वीर नायक बन बए थे और वे उन्हें अपना उद्धारकर्ता मानकर उनके दर्शन की प्रतीक्षा करते थे।

गाँधीजी सिर्फ किसानों के बयान दर्ज करके ही संतुष्ट नहीं थे। वे उनकी दयनीय अवस्था को अपनी आंखों से देखना चाहते थे, ताकि वे उनके दुखों और उन हानिकारक तत्वों को दूर कर सकें, जिसके कारण गरीब किसान त्रस्त थे। ब्रजकिशोर प्रसाद के साथ उन्होंने किसानों की दयनीय अवस्था को अपनी आँखों से देखा और गाँवों का सघन दौरा किया। वे रात्रि में उनके झोपड़ों में उनके साथ ठहरें, भोजन किया और उनके दुख-तकलीफों को अपने दिल में महसूस किया।[20]

बिहार प्लान्टर्स ने गाँधीजी द्वारा की जा रही जाँच का विरोध इस आधार पर किया कि इसके एकपक्षीय (पक्षपात) तस्वीर ही प्रस्तुत होती है और इसमें उनके विरूद्ध किसानों द्वारा दंगों को भड़काने की क्षमता थी। उन्होंने मांग की कि गाँधीजी द्वारा की जा रही जाँच को रोक देना चाहिए और यदि आवश्यकता हो तो सरकार द्वारा ही निष्पक्ष जाँच शुरू की जानी चाहिए। इसके अतिरिक्त कुछ यूपोपीय अधिकारी भी स्थिति से आशंकित थे और उनका मानना था कि गाँधीजी की जाँच एक यूरोपीय विरोधी आंदोलन बन सकता था। विरोध बढ़ने पर अंग्रेजी सरकार ने मामले में हस्तक्षेप

Copyright © 2020 Authors

ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-7 No. 1 July 2020

किया और गाँधीजी को बिहार व उडीसा के कार्यकारी परिषद के सदस्य डब्ल्यू. मोड़ से मिलने के लिए बुलाया गया, जिन्होंने गाँधीजी को अब तक की जाँच की प्रारंभिक रिपोर्ट भेजने का निर्देश दिया। उन्होंने यह भी सुझाव दिया कि इस बीच गाँधीजी के साथियों द्वारा बयानों का अभिलेखबद्ध करना रोक दिया जाना चाहिए और केवल शांतिपूर्ण ढंग से पूछताछ करनी चाहिए। गाँधीजी ने 13 मई को रिपोर्ट सौंपी, परन्तु उन्होंने अपने सहकर्मियों की सेवाओं के न लेने के अनुरोध के अनुपालन से इंकार कर दिया। लेफ्टिनेन्ट गवर्नर सर ई.ए. गेट द्वारा गाँधीजी को 5 जून को उनकी जाँच की प्रारंभिक रिपोर्ट प्रस्तुत करने के संबंध में एक बैठक के लिए रांची बुलाया गया। सरकार पर भारी दबाव होने से एक जाँच आयोग संस्था की माँग बढ़ गई थी इसलिए कुछ दिनों बाद लेफ्टिनेन्ट गवर्नर ने परिषद सहित चंपारण में कृषि स्थितियों की जाँच करने और उसका विवरण देने के लिए एक जाँच समिति नियुक्त करने का निर्णय लिया। गाँधीजी को भी इस जाँच समिति में एक सदस्य के रूप में नियुक्त किया गया। गाँधीजी इस समिति में इस शर्त पर रहने के लिए सहमत हुए कि वे अपने सहयोगियों के साथ विचार-विमर्श करते रहेंगे और किसानों के प्रवक्ता भी बने रहेंगे और अगर जाँच समिति का प्रतिवेदन उनके अनुकूल न होगा तो वे किसानों का मार्गदर्शन करने और सलाह देने के लिए स्वतंत्र होंगे।[21] जैसे ही यह जाँच समिति गठित की गई, गाँधीजी ने व्यक्तिगत रूप से किसानों से बयान लेने बंद कर दिये। 10 जून 1917 को जाँच समिति का प्रस्ताव प्रकाशित किया गया, जिसमें इसके कर्त्तव्य निम्नलिखित थे- जमींदार और पट्टेदार के बीच संबंधों की जाँच करना, इस विषय पर पहले से ही मौजूद साक्ष्यों की जाँच करना और इसमें शामिल सभी लोगों की शिकायतें दूर करने की सिफारिश देना।

जाँच समिति ने जुलाई के मध्य से अपना काम शुरू किया और तीन महीने की अवधि के बाद 4 अक्टूबर 1917 को सरकार को अपनी रिपोर्ट सौंपी। जाँच समिति ने किसानों की सारी मांगे मान ली और 18 अक्टूबर को अखबारों ने भी इसे प्रकाशित कर दिया।[22] एक ऐसी रिपोर्ट तैयार करने के लिए जो सभी को मान्य थी, लेफ्टिनेन्ट गवर्नर ने समिति के सभी सदस्यों को धन्यवाद दिया।[23] इसमें मुख्य रूप से निम्न सिफारिशें की गई थी -

1. तिनकठिया प्रणाली को समाप्त कर दिया जाना चाहिए।
2. अगर कोई नील उगाने के लिए किसी समझौते में शामिल होता है तो यह समझौता स्वैच्छिक होना चाहिए, इसकी अवधि तीन साल से अधिक की नहीं होनी चाहिए और जिस क्षेत्र में नील को उगाया जाना है उसका चयन करने का निर्णय किसानों पर निर्भर होना चाहिए।
3. नील पौधों की बिक्री की दर को किसानों द्वारा निर्धारित किया जाना चाहिए।
4. फैक्ट्रियों को तावान देने वाले किसानों को इसमें से एक चौथाई हिस्सा वापस मिलना चाहिए।
5. अबबाब (अवैध उपकार) की वसूली को रोका जाना चाहिए।[24]

जाँच समिति की रिपोर्ट की प्रतिलिपियाँ चंपारण में वितरित की गई तथा ''चंपारण का उद्धार'' नामक एक बुकलेट भी लोगों में बाँटी गई। यह हिन्दी प्रेस द्वारा छापी गई थी। कानपुर से गणेश शंकर विद्यार्थी द्वारा निकाले जाने वाले अखबार 'प्रताप' ने उत्साह के साथ गाँधीजी के चंपारण आंदोलन की प्रत्येक रिपोर्ट को सीरिज के रूप में छापा था।

सरकार ने जाँच समिति की लगभग सभी सिफारिशों को स्वीकार कर लिया। सिफारिशों को लागू करने के लिए सरकार ने एक प्रस्ताव भी जारी किया। इस रिपोर्ट के आधार पर डब्ल्यू. मौड़ ने 29 नवम्बर 1917 को विधानपरिषद में चंपारण कृषि बिल प्रस्तुत किया और उसी दिन एक उल्लेखनीय भाषण भी दिया। नवम्बर 1918 में, अंततः विधेयक पारित किया गया और यह चंपारण कृषि अधिनियम बन गया। इस अधिनियम से लम्बे समय से किसानों के अमानवीय शोषण का प्रतीक बन चुकी तिनकठिया व्यवस्था समाप्त हो गई। इस तरह चंपारण से एक बड़ा अभिशाप समाप्त हो गया। गाँधी जी ने अपनी आत्मकथा में लिखा है कि ''तिनकठिया प्रणाली जो लगभग एक सदी से अस्तित्व में थी, इस तरह समाप्त कर दी गई और इसके साथ ही प्लान्टरों का राज

Copyright © 2020 Authors

ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-7 No. 1 July 2020

भी समाप्त हो गया।'' अतः हम देखते हैं कि महात्मा गाँधीजी चंपारण सत्याग्रह से किसानों को नील बागान मालिकों के शोषण से मुक्ति मिल गई और भारत को एक निर्विवाद नेतृत्व।

गांधीजी और सामाजिक कार्य

दक्षिण अफ्रीका की तरह गाँधीजी ने चंपारण में यह अनुभव कर लिया था कि जब तक समाज में व्यापक सुधार कार्य नहीं किया जायेगा, लोगों में आत्मविश्वास नहीं आयेगा। उन्होंने चंपारण में शिक्षा, स्वास्थ्य, स्वच्छता, सामूहिक भोजन और छुआछूत के खिलाफ अभियान इत्यादि व्यापक स्तर पर शुरू कर दिए। उन्होंने राजेन्द्र प्रसाद से कहा था कि समस्या का एकमात्र हल ''रैय्यतों को शिक्षित करना और उनके एवं निलहों के बीच निरन्तर मध्यस्थता की प्रक्रिया है।''[25]

गाँधीजी का उद्देश्य चंपारण के गरीब किसानों को नील जमींदारों के अत्याचारों से मुक्ति दिलाने के साथ-साथ जनता को सत्याग्रह के मूल सिद्धांतों से परिचय भी कराना था। वे अपने साथ काम कर रहे स्वयंसेवकों को लेकर चंपारण पहुँचे। इन स्वयंसेवकों में छह महिलाऐं भी थी, अवंतिका बाई, कस्तुरबा गाँधी, मनीबाई पारीख, आनन्दीबाई, श्रीयुत दिवाकर (वीमैंस यूनिवर्सिटी ऑफ पूना की रजिस्ट्रार) का नाम इन महिलाओं में शामिल था। इन लोगों ने किसानों के बच्चों को शिक्षित करने के लिए ग्रामीण विद्यालय खोले।

गाँधीजी का मानना था कि किसी भी तरह का स्थायी सुधार ग्रामीण शिक्षा के बिना अधुरा है, क्योंकि गरीबों की अशिक्षा उन्हें किसी काम को ठीक ढंग से करने से रोकती है।[26] अतः गाँधीजी ने यह निश्चय किया कि प्रत्येक गाँव में एक प्राथमिक विद्यालय की स्थापना की जाए, जहां गाँववालों को शिक्षकों के रहने और खाने का प्रबन्ध मात्र करना होगा। गाँधीजी ने पूरे देश के पढ़े-लिखे लोगों से अपील की कि वे चंपारण आयें और यहाँ आकर शिक्षक का काम करें। उनकी अपील पर महाराष्ट्र और गुजरात से भी कई सम्भ्रान्त महिलाएँ और पुरूष शिक्षण कार्य के लिए चंपारण आये। इनमें डेक्कन सोसाइटी, सरवेन्ट ऑफ इंडिया सोसायटी और साबरमती आश्रम से जुडे स्वयंसेवक थे। 14 नवम्बर 1917 को बारहरवाँ गाँव में गाँधीजी ने चंपारण में पहला स्कूल प्रारम्भ किया। अतः गाँधीजी की प्रेरणा से चंपारण के अनेक गाँवों में प्राथमिक विद्यालयों की स्थापना की गई, जहाँ प्राथमिक शिक्षा के साथ-साथ खेती, बुनाई, वैज्ञानिक बातें, नैतिक आचरण, संस्कृति और व्यवसायिक शिक्षा भी प्रथन करने के प्रसास किये जाते थे। गाँधीजी के स्वंसेवकों ने लोगों को कुओं और नालियों को साफ-सुथरा रखने के लिए प्रशिक्षित किया। उन्हें सफाई के लाभ की जानकारी दी और यह समझाया कि यदि वे साफ रहेंगे और स्वच्छ पानी पीयेंगे तो वे निरोग रहेंगे। गाँधीजी ने स्वयं अपनी पत्नि कस्तूरबा गाँधी से कहा कि वे खेती करने वाली महिलाओं को रोज नहाने और साफ-सुथरा रहने की बात समझाए। चंपारण में लोगों को चिकित्सा राहत देने के लिए डॉ. देव के निर्देशन में क्लीनिक भी खोले गए, जहाँ साधारण दवाइयाँ रखी जाती थी, जैसे कुनैन, बुखार की दवा, पेट सम्बन्धी रोगों की दवा आदि।[27] इस दौरान गाँधीजी ने राजेन्द्र प्रसाद, आचार्य कृपलानी और अनुग्रह बाबू जैसे सहयोगियों को भोजन बनाना एवं घर के अन्य कार्य स्वयं करना सिखा दिया था। इन स्वंसेवकों द्वारा मैला ढोने, धुलाई, झाडू-बुहारी तक का काम किया गया। अतः हम देखते हैं कि गाँधीजी किसानों के शोषण को ही समाप्त नहीं करना चाहते थे अपितु इसके साथ-साथ वे चंपारण में सामाजिक परिवर्तन भी लाना चाहते थे।

चंपारण किसान आंदोलन का महत्व

चंपारण किसान आंदोलन स्थानीय मुद्दों के इर्द-गिर्द संयोजित हुआ था, परन्तु गाँधीजी के हस्तक्षेप ने सामान्य जनसमूह को भी व्यापक राजनीतिक आंदोलन में लाने की जमीन तैयार की। गाँधीजी के करिश्में ने निःसंदेह स्थानीय जनता द्वारा अपने दमन के विरूद्ध किये गये आंदोलन के लिए उनके नेतृत्व को स्वीकार करने में सहायता की, परन्तु गाँधीजी अपने साथ प्रतिरोध की एक नई भाषा भी ले आए। विरोध के एक माध्यम के रूप में हिंसा का अस्वीकार तथा सहनशील प्रतिरोध पर ध्यान देना, शारीरिक शक्ति से अधिक नैतिक शक्ति को अपने राजनीतिक हथियार के रूप में प्रयोग करके गाँधीजी राजनीतिक लामबंदी को एक नई दिशा देने में सफल हुए। गाँधीजी ने राजनीतिक नेताओं के मापदंड के अनुसार बेहद पिछडे क्षेत्र में कार्य किया और निश्चित रूप से बड़ी संख्या में अनुयाइयों को आकर्षित किया क्योंकि उन्होंने वो मुद्दे उठाये जो उनकी रूचि की सीमा से बाहर थे

Copyright © 2020 Authors

ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-7 No. 1 July 2020

तथा अपने समर्थकों को कार्य की वह तकनीक उपलब्ध कराई, जो उनकी आवश्यकताओं के अनुरूप थी लेकिन जिसे नेता उपयोग करने से डरते थे। बहुत कुछ गाँधीजी की करिश्माई अपील द्वारा निर्मित था, वस्तुतः वह एक स्थानीय मसीहा बन गए थे। गाँधीजी की सरलता, दृढसंकल्प तथा सविनय अवज्ञा के साथ-साथ उस समय उड़ रही इस प्रकार की अफवाहों ने कि गाँधीजी सरकारी अधिकारियों से बातचीत करने में सक्षम हैं, ने भी जनसमूह को इस आशा से गाँधीजी की तरफ खींचा कि वे उनकी शिकायतों का निवारण करेंगे। उनके हस्तक्षेप ने न सिर्फ जनसमूह द्वारा प्रारम्भ किए गए चंपारण आंदोलन को दिशा प्रदान की अपितु गाँधीवादी अहिंसा ने आंदोलन को एक प्रभावी और वैध रूप प्रदान किया जो अब तक अज्ञात था। इस आंदोलन के दौरान गाँधीजी को राजेन्द्र प्रसाद, आचार्य जे.बी. कृपलानी, मजहरूल हक, ब्रजकिशोर जैसी महान विभुतियां मिली, जिन्होनें बाद में भारत के राष्ट्रीय आंदोलन में महत्वपूर्ण भूमिकाएँ निभाई। गाँधीजी ने अभी एक भविष्य में राष्ट्रवादी राजनीति से जुड़ाव के संबंध में कोई निर्णय नहीं लिया था, परन्तु चंपारण किसान आंदोलन ने निश्चित रूप से एक राष्ट्रीय नेता के रूप में गाँधीजी की बड़ी भूमिका हेतु जमीन तैयार की।

चंपारण किसान आंदोलन के दौरान ही किसानों की दुर्दशा देखकर गाँधीजी ने यह निश्चित किया कि वे आगे से केवल एक कपड़े पर ही गुजर-बसर करेंगे। इसी आंदोलन के बाद उन्हें ''महात्मा'' की उपाधि से विभुषित किया गया। गाँधीजी के प्रयासो से चंपारण में तिनकठिया प्रथा समाप्त हुई, इसका जो मनोवैज्ञानिक प्रभाव पड़ा वह ठोस गतिविधियों से कहीं अधिक महत्वपूर्ण था। बेतिया के एस.डी.ओ. ने 29 अप्रेल 1917 की अपनी रिपोर्ट में लिखा, ''गाँधी प्रतिदिन अज्ञानी जनसमुदाय की कल्पना को आसन्न स्वर्णयुग के स्वप्न दिखाकर रूपांतरित कर रहे हैं।'' एक किसान ने गाँधीजी की तुलना भगवान रामचन्द्र से की और जाँच समिति के समक्ष कहा कि, अब गाँधीजी आ गए हैं तो काश्तकारों को राक्षस निलहों का काई भय नहीं है। ऐसी भी अफवाहें फैली कि सभी स्थानीय अधिकारियों एवं निलहों को काबू में करने के लिए वायसरॉय या सम्राट ने गाँधीजी को भेजा है तथा कुछ ही महीनों में अंग्रेज चंपारण छोड़कर चले जाएंगे।[28] अप्रेल 1917 में जब यह आंदोलन शुरू हुआ, चंपारण के लगभग 850 गाँवों के 8000 से ज्यादा काश्तकारों ने महात्मा गाँधी की देखरेख में यूरोपीय बागान मालिकों के 60 कारखानों के खिलाफ बयान दिए। इस आंदोलन पर टिप्पणी करते हुए गाँधीजी ने अपनी आत्मकथा में लिखा है कि लोग कुछ समय के लिए दंड के भय को भूल गए और उन्होने अपने आपको उस प्रेम की सत्ता के सामने समर्पित कर दिया जिसकी शिक्षा उनके नए मित्र ने दी थी। ई.एम.एस. नंबूदरीपाद ने भी चंपारण आंदोलन की सफल समाप्ति के लिए गाँधीजी और उनके साथियों की प्रशंसा की।[29]

चंपारण आंदोलन ने गाँधीवादी राजनीतिक रणनीति का सबसे पहला प्रदर्शन देखा जो अतिरिक्त संवैधानिक संघर्ष के तत्वों के संयोजन से संरचना के भीतर उपलब्ध संवैधानिक स्थान का उपयोग करके मौजूदा संरचना पर हमला था। सत्याग्रह का व्यापक और गहरा प्रभाव हुआ और देश को इससे कई लाभ हुए। इनमें प्रथम, सत्याग्रह की ताकत से लोग परिचित हुए, दुसरा जनशक्ति की ताकत से लोग परिचित हुए तीसरा, स्वच्छता और शिक्षा को लेकर भारतीय जनमानस में नई जागृति आई, चौथा महिलाओं की स्थिति सुधारने के प्रयास हुए और पाँचवा अपने हाथों से काते गए सूत के वस्त्र पहनने की सोच पैदा हुई।

इस आंदोलन ने भारतीय जनता को शोषण के विरूद्ध भयमुक्त होकर संघर्ष करने की प्रेरणा दी जो आगे चलकर स्वतन्त्रता संघर्ष में देश की जनता की सबसे बड़ी शक्ति बनी। यह आंदोलन वास्तव में उस बड़े राष्ट्रीय संघर्ष का पूर्वाभ्यास था जो शीघ्र ही पूरे देश के रंगमंच पर खेला जाने वाला था। गाँधीजी ने चंपारण में सर्वप्रथम एक ''शैक्षणिक आधार'' पर कानूनी लडाई (नीलहे कृषकों की समस्याओं के बारे में तथ्यों का संकलन और विश्लेषण) को आरम्भ कर विधिक स्वरूप प्रदान कराने का सफल प्रयास किया। इसका परिणाम यह हुआ कि गाँधीजी से जन-समान्य प्रत्यक्षतः सम्बद्ध हो गया और उन्हें विश्वास हो गया कि आने वाले स्वतन्त्रता आंदोलन को गाँधीजी के नेतृत्व में ही लड़ा जाना उपयुक्त होगा।

Copyright © 2020 Authors

ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-7 No. 1 July 2020

इन तथ्यों से समझा जा सकता है कि चंपारण किसान आंदोलन देश के राजनीतिक इतिहास में कितना महत्वपूर्ण है। इस आंदोलन से ही राष्ट्र को नया नेतृत्व और नई तरह की राजनीति मिलने का विश्वास पैदा हुआ। इस तरह से चंपारण किसान आंदोलन भारत की आजादी के संघर्ष का मजबूत प्रतीक बन गया था।

निष्कर्ष

महात्मा गाँधी के प्रथम सत्याग्रह यानि चंपारण सत्याग्रह के सौ साल पूरे हो चुके हैं और हम उनकी 150वीं जयन्ती भी मना रहे हैं। लेकिन सामाजिक और राजनीतिक संघर्षों का समाधान तलाश रहा आज का समाज ''अहिंसा और सत्याग्रह'' का सच्चा प्रयोग नहीं कर पा रहा है जिससे बदलाव की किरण हमें दूर-दूर तक कहीं नजर नहीं आ रही है। वर्तमान समय में अहिंसा और सत्याग्रह के वास्तविक धर्म और मर्म को ठीक से सीखने और समझने की आवश्यकता है और यह सत्यनिष्ठा, अहिंसाभाव, निर्भयता, निर्वरता और नैतिकता के आत्मबल से ही प्राप्त हो सकता है।

चंपारण सत्याग्रह भारत के स्वतंत्रता आंदोलन के इतिहास में ऐतिहासिक और अभूतपूर्व परिघटना है। चंपारण में इस प्रयोग से आमजन के हाथों में पहली बार सत्याग्रह के रूप में ऐसा अचूक अस्त्र आया जिसके प्रयोग से आमजन ने बिना रक्त बहाए एक विश्वव्यापी साम्राज्य को जड़ से उखाड़ फैंका। इसका असर दूनिया के अनेक मुक्ति संघर्षो पर पड़ा। नेल्सन मडेला, मार्टिन लुथर, आदि अनेक विश्वप्रसिद्ध नेताओं ने गाँधीजी का अनुसरण किया। आज भी विश्व में शांति और अहिंसा की मिसाल के रूप में गाँधीजी का नाम सर्वोपरी है।

चंपारण सत्याग्रह महात्मा गाँधी के अगले सत्याग्रहों और आजादी की लड़ाई के लिए आधार बना। गाँधीजी के अनुसार इस सत्याग्रह का उद्देश्य जमींदारों को किसानों के पैसे लौटाने के लिए बाध्य करना नहीं था बल्कि इस आंदोलन का उद्देश्य था शासन तथा विदेशी कानून के तले दबे किसानों में विरोध करने की हिम्मत का संचार करना। जो किसान पुलिस व कचहरी के नाम से काँपते थे, उनको यह दिखाया गया कि पुलिस और कचहरी से न सिर्फ लड़ना बल्कि जीतना भी सम्भव है। चंपारण किसान आंदोलन ने महात्मा गाँधी को गाँधीवादी तरीकों को भारत में आजमाने का अवसर दिया था, साथ ही साथ उनको देश की जनता के नजदीक आने व उनकी समस्याएँ समझने का भी अवसर मिला था। गाँधीजी को जनता की ताकत और उसकी कमजोरियों का पता चला। उनकी रणनीति कारगर साबित हो सकती है, इसका अनुमान लगाने का भी अवसर मिला। बहुत सारे राजनीतिक कार्यकर्ता विशेषकर युवा पीढ़ी के, उनको श्रद्धा की नजर से देखने लगे और इस दौरान गाँधीजी ने भारतीय जनता के बीच अपनी एक अलग पहचान बना ली।

चंपारण आंदोलन की विजय किसानों और गाँधीजी की नैतिक विजय थी। इसके बाद गाँधीजी ने चंपारण में कई सुधार आंदोलनों को आरम्भ करवाया जिससे शिक्षा उन्नयन, सफाई एवं चिकित्सा सुविधाओं के लिए महत्वपूर्ण सुधार हुए। इस प्रकार गाँधीजी का चंपारण सत्याग्रह मात्र राजनीतिक ही नहीं था अपितु यह सामाजिक जागरण की दिशा में भी एक महत्वपूर्ण प्रयास था। इस आंदोलन के माध्यम से उन्होंने भारतीय आमजन को यह बतलाया था कि किस तरह सत्य और अहिंसा के प्रयोग से शोषकों को सबक सिखाया जा सकता है।

चंपारण के सत्याग्रह को आज के संदर्भ में देखना चाहिए। देश के किसान कर्ज के बोझ से दबे होने के कारण आत्महत्या के लिए विवश है। नई आर्थिक नीति के प्रभाव से अर्थिक विषमता बढी है। तथाकथित सामाजिक न्याय के नाम पर जातिगत विद्वेष लगातार बढ़ रहे हैं और राजनीति से वंशवाद पुख्ता होता चला जा रहा है। महात्मा गाँधी के संदेश- सत्य, अहिंसा, प्रेम, सदाषयता आदि को लोगों द्वारा भुलाए जा रहे हैं। इस दिशा में सरकार को साथ-साथ विभिन्न स्वयंसेवी संगठनों की भी पहल करने की आवश्यकता है ताकि हम गाँधीजी के रामराज्य की कल्पना की सकार कर सकें और समाज के पीड़ित वर्ग को शोषण से मुक्ति दिला सके।

संदर्भ सूची

1. चंद्रा, अशोक : फ्रीडम इन इंडिया, पृ. 261
2. गाँधी, मोहनदास करमचन्द : माई एक्सपेरिमेन्ट विद् ट्रूथ, पृ. 490
3. दत्ता, डॉ. के.के. : फ्रीडम मूवमेण्ट इन बिहार, पृ. 45

Copyright © 2020 Authors

ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-7 No. 1 July 2020

4. दत्ता, डॉ. के.के. : फ्रीडम मूवमेण्ट इन बिहार, पृ. 117
5. गाँधी, मोहनदास करमचन्द : माई एक्सपेरिमेन्ट विद ट्रुथ, पृ. 495
6. रिपोर्ट ऑफ थर्टी फस्ट इंडियन नेशनल कांग्रेस, पृ. 68
7. शुक्ल, आर.एल. (संपा.) : आधुनिक भारत का इतिहास, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय दिल्ली विश्वविद्यालय, 2001, पृ. 645
8. चौधरी, सुखबीर : अर्ली स्ट्रगलस (1905-18) पृ. 229
9. चौधरी, सुखबीर : अर्ली स्ट्रगलस (1905-18) पृ. 227
10. प्रसाद, राजेन्द्र : सत्याग्रह इन चंपारण, पृ. 104
11. गाँधी, मोहनदास करमचन्द : माई एक्सपेरिमेन्ट विद् ट्रुथ, पृ. 494
12. गाँधी, मोहनदास करमचन्द : माई एक्सपेरिमेन्ट विद् ट्रुथ, पृ. 501
13. गाँधी, मोहनदास करमचन्द : माई एक्सपेरिमेन्ट विद् ट्रुथ, पृ. 501
14. प्रसाद, राजेन्द्र : सत्याग्रह इन चंपारण, पृ. 104
15. गाँधी, मोहनदास करमचन्द : माई एक्सपेरिमेन्ट विद् ट्रुथ, पृ. 502
16. गाँधी, मोहनदास करमचन्द : माई एक्सपेरिमेन्ट विद् ट्रुथ, पृ. 503
17. गाँधी, मोहनदास करमचन्द : माई एक्सपेरिमेन्ट विद् ट्रुथ, पृ. 504
18. प्रसाद, राजेन्द्र : सत्याग्रह इन चंपारण, पृ. 112
19. प्रसाद, राजेन्द्र : सत्याग्रह इन चंपारण, पृ. 130
20. प्रसाद, राजेन्द्र : सत्याग्रह इन चंपारण, पृ. 116
21. गाँधी, मोहनदास करमचन्द : माई एक्सपेरिमेन्ट विद् ट्रुथ, पृ. 318-319
22. रिपोर्ट ऑफ द चंपारण एग्रेरियन कमेटी, वोल्युम-प्, पृ. 19
23. रिपोर्ट ऑफ द चंपारण एग्रेरियन कमेटी, वोल्युम-प्, पृ. 19
24. रिपोर्ट ऑफ द चंपारण एग्रेरियन कमेटी, वोल्युम-प्, पृ. 19
25. सरकार, सुमित : आधुनिक भारत (1885-1947), राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2012 पृ. 204
26. प्रसाद, राजेन्द्र : महात्मा गाँधी इन बिहार, पृ. 30
27. प्रसाद, राजेन्द्र : महात्मा गाँधी इन बिहार, पृ. 32
28. सरकार, सुमित : आधुनिक भारत (1885-1947), राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2012 पृ. 203-204
29. राय, डॉ. सत्या एम. : भारत में उपनिवेशवाद और राष्ट्रवाद, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, 2016, पृ. 476-477
30. बंद्योपाध्याय, शेखर : प्लासी से विभाजन तक और उसके बाद, ओरिएंट ब्लैकस्वान, नई दिल्ली, 2016

Copyright © 2020 Authors